International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(6): 06-09

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(6): 06-09
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 03-09-2017
Accepted: 04-10-2017

डॉ. शिप्रा पारीक
व्याख्याता, संस्कृत, एस.एस.जैन सुबोध स्नातकोत्तर (स्वायत्तशासी) महाविद्यालय, जयपुर, राजस्थान, भारत

Correspondence
डॉ. शिप्रा पारीक
व्याख्याता, संस्कृत, एस.एस.जैन सुबोध स्नातकोत्तर (स्वायत्तशासी) महाविद्यालय, जयपुर, राजस्थान, भारत

संस्कृत साहित्य में शौर्याभिव्यक्ति

डॉ. शिप्रा पारीक

प्रस्तावना

शौर्य शब्द शूर से बना है जिसका अर्थ है शूरता, वीरता, पराक्रम, बल, ताकत – *''शूरत्वस्य भावं शौर्यम्।''* (शूरता का जिसमें भाव हो, वह शौर्य)

काव्यशास्त्र के आचार्यों ने काव्य में वीर व रौद्र रस की रसाभिव्यक्ति के लिये शूरता को अत्यावश्यक आत्मगुण स्वीकार किया है। गुण निरूपण प्रसंग में आचार्य ने स्पष्ट किया कि जैसे शौर्य इत्यादि गुण आत्मा के होते हैं, वैसे ही माधुर्य–ओज और प्रसाद गुण काव्य की आत्मा रस के धर्म होते हैं और वे गुण रस (आत्मा) के साथ स्थायी रूप से रहते हैं तथा आत्मोत्कर्ष की वृद्धि करते हैं–

ये रसस्याङ्गिनो धर्माः शौर्यादय इवात्मनः।
उत्कर्षहेतवस्ते स्युरचलस्थितयो गुणाः।।

(काव्यप्रकाश 8/66)

शौर्य मनुष्य का आत्मिक गुण है जो कि समवाय सम्बन्ध से रहता है। किन्तु इसकी शारीरिक प्रतीति केवल औपचारिक है।

आत्मनः एव ही यथा शौर्यादय ना कारस्य

(काव्यप्रकाश)

इसलिये लोक व्यवहार में कहीं शौर्य के योग्य बड़ा शरीर (आकार) देखकर हम ''इसका तो शरीर ही शूर है'' तथा अशूर होने पर भी बड़ा शरीर होने से शूर कह देते हैं तथा छोटा शरीर होने पर अशूर कह देते हैं, इसलिये आत्ममर्यादा को समझाने वाले यह जानते हैं कि शूरता मनुष्य का आत्मगुण है जो कि समुचित शरीर के द्वारा प्रकट होता है।

जिस प्रकार मनुष्य में शूरता से ओज दिखता है, वैसे ही काव्य में भी शौर्य के वर्णनों में ओजो गुण परक रसाभिव्यक्ति होती है।

ओजगुण का स्वरूप स्पष्ट करते हुए आचार्य मम्मट लिखते हैं –

''दीप्त्यात्मविस्तृतेर्हेतुरोजो वीर रसस्थिति''

अर्थात् शौर्य की अवस्था में अथवा शूरवीर में आत्मा की विस्तार अर्थात् अत्यधिक उत्साह एवं क्रोध सम्मिश्रित स्थिति जो होती है, वह आत्मा को उद्दीप्त कर देती है, फलतः मनुष्य में यह भाव उत्पन्न हो जाता है कि **''**कार्यं वा साधयामि, शरीरं वा पातयामि**''** कार्य सम्पन्न करना है, चाहे शरीर नष्ट हो जाये। इस प्रकार के उद्दीप्त भावों को काव्य में दीप्ती गुण कहते हैं और वही ओजगुण की संवाहक होती है जिससे वीर व रौद्र रसों की अभिव्यक्ति होती है।

यह दीप्ती वीर रस के पश्चात् वीभत्स व रौद्र में क्रमशः अतिशय प्रभावशाली गुण होती है –

कवि अपने काव्यों में शौर्याभिव्यक्ति हेतु भाषा एवं भावों का संयोजन ओजगुण के अनुरूप ही करता है जिससे भाषा में भी ओज प्रकट होता है। जैसे क इत्यादि वर्गों के पहले अक्षर (क, च, ट, त, प) का द्वितीय (ख, छ, ठ, थ, फ) के साथ संयुक्ताक्षर बनाकर एवं तृतीय ग, ड, द, ब, वर्गों को चतुर्थ घ, झ, ढ, ध, भ के साथ संयुक्त कर रेफ का प्रयोग कर, समान वर्णों का संयोग करके, बार–बार ट, ठ, ड,

द, त, थ, श और षकार का प्रयोग करते हुये रचना को विकट अर्थात् उद्धत बनाना चाहिये, जिससे वह शौर्यानुकूल रसों को अभिव्यक्त करने में सक्षम हो –

योगः आद्य तृतीयाभ्यामन्त्ययो रेण तुल्ययोः।
टादि शषौ वृत्तिदैर्ध्य गुम्फ उद्धत ओजसि।।
(काव्यप्रकाश – 8/75)

जब गुरू बन्धु इत्यादि के साथ परम अपराध होता है तो उसमें प्रज्ज्वल क्रोध उत्पन्न होता है, वह रौद्र रस का स्थायी भाव है। यही जब कम अपराध से उत्पन्न होता है तो उसे अमर्ष कहते हैं और वह व्यभिचारी भावों में गिना जाता है।

''गुरुबन्धुवधादि परमापराधजन्मा प्रज्ज्वलनारव्यः क्रौधः''
(रसगंगाधर प्रथम आनन)

वीर रस में स्थायी भाव उत्साह होता है, दूसरे के पराक्रम तथा दान आदि के स्मरण से उन्नतता नामक चित्तवृत्ति उत्पन्न होती है उसे उत्साह कहते हैं –

पराक्रम – *दानादिस्मृतिजन्मा औन्नत्याख्य उत्साहः* अथवा कार्यों के उपस्थित होने पर उत्कट आग्रह उत्साह कहलाता है।
(रसगंगाधर/प्रथम आनन)

''कार्यारम्भेषु संरम्भः स्थेयानुत्साहः''

रौद्ररस में अपराध करने वाला पुरुषादि आलम्बन विभाव, उसके द्वारा किये गये अपराधादि उद्दीपन विभाव, आंखें लाल करना, दांत कटकटाना, कठोर भाषण, शस्त्र ग्रहण करना, जिसके फलस्वरूप वध या बन्धन करना हो, अनुभाव होते हैं। अमर्ष, वेग, उग्रता, चंचलता आदि व्यभिचारी भाव होते हैं। इसी प्रकार वीर रस में शत्रु आलम्बन विभाव, उसका पराक्रम देखना, उद्दीपन विभाव, दोनों ओर से होने वाले प्रहारादि अनुभाव, हर्ष वेग आदि व्यभिचारी भाव होते हैं।
वीर रस हमारे शास्त्र में 4 प्रकार का कहा गया है – दानवीर, दयावीर, युद्धवीर व धर्मवीर, अतएव इन चारों में ही शौर्याभिव्यक्ति होती है।
शौर्याभिव्यक्ति के शास्त्रीय स्वरूप पर विचार करने के पश्चात् जब हम संस्कृत वाङ्मय में इस प्रवृत्ति पर विचार करते हैं तो हमारे प्राचीनतम साहित्य वेदों से ही इससे ओत–प्रोत वर्णन देखे जाते हैं।
शौर्याभिव्यक्ति वैदिक साहित्य में वैदिक देवताओं के आवश्यक गुण के रूप में प्रकट होती है। चाहे वह देवता इन्द्र हो, रूद्र या प्रजापति सबमें शौर्य असत् के नाश एवं सद् की स्थापना के लिये प्रतिबद्ध रहता है

यो जात एव प्रथमो मनस्वान
देवो देवानक्रतुना पर्यभूषत्।
यस्य शुष्माद्रोदसी अभ्यसेतां
नृम्ण्स्य महना स जनास इन्द्रः।
(ऋग्वेद 2/12/1)

अर्थात् जिस देव (इन्द्र) ने अपने उत्तम कर्मों द्वारा देवताओं को अलंकृत कर दिया तथा जिसमें बल, शौर्य व पराक्रम की महिमा से धूलोक तथा पृथ्वी लोक कांपते हैं, वह इन्द्र है।
इसी प्रकार इन्द्र के शौर्य की अभिव्यक्ति इस रूप में भी होती है –

यस्मान्न ऋते विजयन्ते जनासो
यं युध्यमाना अवसं हवन्ते
यो विश्वस्य प्रतिमानं बभूव
यो अच्युतच्युत्स जनास इन्द्रः
(ऋग् 2/12/9)

अर्थात् जिस इन्द्र के बिना लोग विजय प्राप्त नहीं करते, युद्ध करते हुये उसे अवश्य बुलाते हैं और जो विश्व का एक प्रतिमान है और जो स्थिरों को भी अस्थिर कर देता है, वह इन्द्र है।
ऋग्वेद में राजा के लिये कहा गया है कि वो मनुष्यों में सबसे अधिक वीर होना चाहिये, उसके शौर्य से ही प्रजायें संरक्षित होती है

''वीरतमाय नृणाम्''
(ऋ. 3/5/2/1)

शौर्यवान् राजा के लिये यह आवश्यक है कि वह ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करता हुआ तदनन्तर गृहस्थ बना हो तथा वहां भी संयम का ही जीवन व्यतीत करता हो। इसी प्रकार का राजा ही राष्ट्र की रक्षा में समर्थ है –

ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति।
(अथर्व. 11/5/17)

आदिकवि वाल्मीकि रचित रामायण में राम एवं अन्य पात्रों के चरित्र में शौर्याभिव्यक्ति उत्कृष्ट रूप से हुयी है। मन्त्रिगणों के विषय में कहा गया कि वे शूर, दृढ़, पराक्रमी और शास्त्रज्ञ थे –

कच्चिदात्मसमाः शूराः श्रुतवन्तो जितेन्द्रिया।
कुलीनाश्चेङ्गितज्ञाश्च कृतास्ते तात मन्त्रिणः।।
(रा. 2/114/901)

राम के विषय में वाल्मीकि रामायण में कहा गया कि –

कस्य बिभ्यति देवाश्च जातरोषस्य संयुगे।
(रा. 1/1/4)

अर्थात् वे कौन हैं जिनके कुपित होने पर संग्राम में देवता भी बड़े भयभीत होते हैं। विश्वामित्र ने राम के शौर्य को जानते हुये ही तो दशरथ से आश्रम में राक्षसों से रक्षा के लिये राम को भेजने को कहा था –

स्वपुत्रं राजशार्दुलं रामं सत्य पराक्रमम्।
काकपक्षधरं शूरं ज्येष्ठं में दातुमर्हसि।।
(रा. 1/18/8)

इसी प्रकार राम दण्ड कारण्य निवासियों ऋषियों की रक्षा का प्रण लेते हैं–

ते चार्ता दण्डकारण्ये मुनयः संशितव्रता।
मां सीते स्वयमागम्य शरण्यं शरणंगता
तदवश्यं मया कार्यमृषीणां परिपालनम्।।
(रा. 3/9/19)

राम अनेकों बार दशरथ के द्वारा भेजे जाकर संग्राम करते थे और विजयी होकर लौटते थे –

यदा व्रजति संग्रामें ग्रामार्थे नगरस्य वा।
गत्वा सौमित्रिसहितो नाविजित्य निवर्तते।।
(रा. 2/2/24)

अर्थात् शौर्य से अधिक कोई तीनों लोकों में महत्वपूर्ण नहीं है। महाभारत के शान्तिपर्व में शौर्यवान जनों का प्राशस्त्य वर्णन है कि

शौर्य और पराक्रम से युक्त समर्थ व्यक्ति ही यश प्राप्त करता है, शूरवीरों की भुजाओं में यह संसार पुत्रवत आश्रय लेता है, इसलिये सभी अवस्थाओं में वीर सम्माननीय होता है –

शूरबाहुषु लोकोऽयं लम्बते पुत्रवत् सदा।
तस्मात् सर्वास्वस्थासु शूरः सम्मानमर्हति।।
(महा.शा. पर्व 99/17)

लौकिक साहित्य में रामायण महाभारतादि इतिहास, काव्य, नाटक, कथा इत्यादि में शौर्याभिव्यक्ति के वर्णन सामाजिकों को आह्लादित करते हैं। जैसे वेणी संहार नाटक में धीरोद्धत नायक भीमसेन को जब दासी से भानुमति द्वारा द्रौपदी को अपमानित करने की सूचना मिलती है तो उससे क्रुद्ध होकर दुर्योधन के विनाश की प्रतिज्ञा करता है –

च×चद्भुजभ्रमितचण्डगदाभिघ्नात
स×चूर्णितोरुयुगलस्य सुयोधनस्य।
स्त्यानानवबिद्घघन शोणित–शोणपाणि
रूत्तं संयिष्यति कचांस्तव देवि भीमः।।
वेणी 1/21

हे द्रौपदी, फड़कती हुयी भुजाओं के द्वारा घुमायी गयी भयंकर गदा के प्रहार से चूर्ण दोनों जंघाओं वाले दुर्योधन के, चिकने तथा लगे हुये गाढ़े रक्त से लाल हाथों वाला भीमसेन तुम्हारे केशों को संवारेगा। यहां पर भीम के वक्तव्य में रौद्ररस के रूप में शौर्याभिव्यक्ति हो रही है जिसका विभाव दुर्योधन, द्रौपदी का अपमानित किया जाना उद्दीपन, कटाक्ष, भुजा फड़काना, आंखे लाल करना इत्यादि अनुभाव एवं अमर्षादि व्यभिचारी भाव एवं क्रौध स्थायीभाव है।
इसी प्रकार युधिष्ठिर के संधी करने के लिये प्रयत्नशील होने पर भीम के वाक्यों में शौर्याभिव्यक्ति देखिये –

मथ्नामि कौरवशतं समरे न कोपात
दुःशासनस्य रूधिरं न विबाम्युरस्तः।
संचूर्णयामि गदया न सुयोधनोरू
सन्धिं करोतु भवतां नृपतिः पणेन।।
(वणीसंहार 1/15)

अर्थात् मैं संग्राम में सौ कौरवों का मर्दन नहीं कर डालूंगा। क्या मैं दुःशासन के वक्ष से रक्त का पान नहीं करूंगा। क्या मैं गदा से दुर्योधन की जंघा को चूर्ण–चूर्ण नहीं कर डालूंगा। तुम्हारे राजा मूल्य देकर संधि करें।
महाकवि कालिदास के काव्यों में शौर्यानुकूल वर्णनों में शौर्याभिव्यक्ति देखी जाती है – मालविकाग्निमित्र नाटक में सेनापति पुष्पमित्र के पत्र से अग्निमित्र के पुत्र वसुमित्र की वीरता की सूचना मिलती है कि उसने बड़े पराक्रम से यवनों को परास्त कर अश्वमेघ यज्ञ का घोड़ा छीन लिया है –

ततः परान्पराजित्य वसुमित्रेण धन्विना।
प्रसह्य ह्रियमाणो मे वात्रिराजो निवर्तितः।।
(मालविका. 5/15)

यहां वसुमित्र के वर्णन में शौर्याभिव्यक्ति होती है। इसी प्रकार अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक में कण्व का शिष्य दुष्यन्त के शौर्य की प्रशंसा करता हुआ कहता है कि राजा ने आश्रम में प्रवेश करते ही आश्रम को बाधारहित बना दिया है –

का कथा बाणसन्धाने ज्याशब्देनैव दूरतः।
हूंकारेणैव धनुषः स हि विघ्नानपोहति।।
अभि. 3/1

शौर्यवान व्यक्ति उद्यमी होता है, वह कभी उद्यम (कार्य) से विरत नहीं होता, इसलिये नीतिशास्त्र में उसे बन्धु के समान बताया गया है जिसको धारण करने से व्यक्ति पीड़ित नहीं होता –

नास्त्युधम समो बन्धु यं कृत्वा नावसीदति।।
(नीतिशतक/26)

महाकवि भारवि रचित किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में द्वैत वन में निवास करने वाले पाण्डवों को मार्गदर्शन करते हुये कहा जाता है कि युद्ध में विजय प्रकर्ष (शौर्य) के अधीन ही होती है।

''प्रकर्षतन्त्रा हि रणे जयश्रीः''
(किरात. 3/17)

जिस व्यक्ति में सफल क्रौध निवास करता है तथा दानादि के द्वारा अपने इष्टजनों की आपत्तियों को दूर करता है, उसके शत्रु एवं मित्र दोनों ही वश में होते हैं किन्तु जो अमर्षशून्य है तथा कुछ कार्य आने वाला नहीं है, न तो उसका मित्रों में आदर है, न ही उससे कोई शत्रु डरता है –

अवन्ध्यकोपस्य विहन्तुरापदां भवन्ति वश्याः स्वयमेव देहिनः।
अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना, न जातहार्देन न विद्विषादरः।।
(किरात. 1/33)

शौर्य की महिमा अद्भुत है, भला सिंह का किसने राज्याभिषेक किया है किन्तु अपने पराक्रम से अर्जित उसके राज्य में वह स्वयं ही राजा है।

नाभिषेको न संस्कारः सिंहस्य क्रियते मृगैः।
विक्रमार्जित राज्यस्य स्वयमेव मृगेन्द्रता।।
हितोपदेश 2/11

शुक्रनीति में भी स्पष्ट कहा गया है –

''न हि शौर्यात् परं किंचित् त्रिषु लोकेषु विद्यते''

शौर्यवान् व्यक्ति दुःख और सुख को नहीं गिनता, चाहे पृथ्वी पर सोना पड़े या पर्यंक पर, चाहे शाक–भाजी खानी पड़े या उत्तम भात, चाहे वल्कल वस्त्र पहनना पड़े या बहुमूल्य उत्तम वस्त्र इनमें वह परिवर्तित नहीं होता।

क्वचित् पृथ्वीशय्यः क्वचिदपि च पर्यकशयनम्
क्वचिच्छाकाहारः क्वचिदपि च शाल्योदनरुचिः।
क्वचित् कन्थाधारी क्वचिदपि च दिव्याम्बरधरो
मनस्वी कार्यार्थी न गणपति दुःखं न च सुखम्।

(नीति/82)

यद्यपि ''क्षमा वीरस्य भूषणं'' स्पष्टतः कहा गया है, परन्तु –
वीर पुरुष सर्वदा क्षमा नहीं करता, जैसे स्त्रियां रतिकाल में लज्जा नहीं रखती, वैसे ही अपमान व पराभव की स्थिति में शौर्यवान् ही होना चाहिये, यह बात शिशुपालवध में बलराम जी श्रीकृष्ण को शिशुपाल पर पराक्रम करने हेतु समझाते हैं –

अन्यदाभूषणं पुंसः क्षमा लज्जैव योषितः।
पराक्रमः परिभवे वैयात्यं सुरतेष्विव।।
(शिशु. 2/44)

राष्ट्र की रक्षा एवं संस्कृति की रक्षा के लिये हमारे वर्णाश्रम धर्म में क्षत्रिय के लिये शौर्य, तेज, धैर्य, उदारता, युद्ध से विमुख न होना, दान एवं ऐश्वर्य का भाव ये सब गुण आवश्यक बतलाये गये हैं।

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे याप्यपलायनम्।
दानमीश्वर भावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्।।
(गीता 18/43)

महात्मा विदुर ने भी कहा कि यदि प्राणी की मृत्यु अवश्यम्भावी है तो वह अपने जीवनकाल में भला यश को मलिन क्यों करे, अर्थात् उसे शौर्यवान् होना चाहिये।

यदि मरणमवश्यमेव जन्तोः
किमिति मुधा मलिनं यशः कुरुध्वे
(विदुरनीति)

महाकवि बाणभट्ट ने कादम्बरी में शौर्याभिव्यक्ति के अनुकूल गुणवर्धन को वीर के लिये महत्वपूर्ण माना है। ''उन्नमयन्नतान, आश्वासयन भीतान, रक्षन् शरणागतान, उन्मूलयन विटपकान, उत्सादयन कण्टकान, पूजयन्नग्रजन्मनः प्रणमन् मुनीन्, प्रकाशयन विक्रमं, आरोपयन प्रतापं उपचिन्वन यशः..... अवनमय द्विषतां शिरांसि, उन्नमय बन्धुवर्गम्, अभिषेकानन्तरं च प्रारब्धदिग्विजय परिभ्रमन् विजितामपि तव पित्रा सप्तद्वीपभूषणां पुनर्विजयस्व वसुन्धराम्। अयं च ते कालः प्रतापंमारोपयितुम् आरूढ़ प्रतापो हि राजा त्रैलोक्यदर्शीव सिद्धा देशो भवति।
– (कादम्बरी/शुक्रनासोपदेश वर्णन)
इस प्रकार संस्कृत वाङ्मय शौर्याभिव्यक्ति से भरा है, वृहद् एवं उन्नत जीवनोद्देश्यों की पूर्ति एवं साफल्य शौर्याधारित ही है, अतः शौर्य के महत्व को व्यक्त करती हुयी यह उक्ति द्रष्टव्य है। इस सुवर्णपुष्पमयी पृथ्वी के स्वर्ण पुष्पों को चुनने में तीन प्रकार के मनुष्य सफल हैं – शूर, विद्वान एवं सेवाभावी –

सुवर्णपुष्पां पृथिवीं चिन्वन्ती पुरुषास्त्रयः।
शूरश्च कृत विद्यश्च यश्च जानाति सेवितुम।।